IJNRD.ORG ISSN : 2456-4184
INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD) | IJNRD.ORG
An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

हिंदी सिनेमा का बदलता रूप

प्रियांशी गुप्ता

स्नातक और परास्नातक ;हिंदी मेंद्धए दिल्ली विश्वविद्यालय

पीण्जीण डिप्लोमा हिंदी पत्रकारिताए दिल्ली विश्वविद्यालय

आज तक के सिनेमाई सफर को यदि हम देखें तो इसे अब तक सौ से भी अधिक साल पूरे हो चुके हैं।इन सौ सालों में सिनेमा ने बहुत कुछ सहा,झेला और बदला। सिनेमाई दुनिया चकाचौंध से भरी और कल्पना से लबालब नज़र आती है।यह बता पाना मुश्किल हो सकता हैं कि सिनेमा ने खुद को कैसे बदला और हर व्यक्ति पर वह अपनी छाप कैसे छोड़े हुए है? लेकिन हम इसका अंदाज़ा लगाये तो जान पाते हैं कि सिनेमा को हम तक लाने वाले हम खुद हैं, आम जनता है।इस ग्लैमरस की दुनिया को अपने घर, जीवन में हम ही लाये हैं।

यदि आज इसके बदलते रूप की बात करें तो सिनेमा ने खुद को बहुत बदला है और साथ ही पुरानी चली आ रही रूढ़ियों को खारिज़ कर अपने नये प्रतिमान बनाये और उन पर काफी हद तक खरा भी उतरा है।सिनेमा ने अपने दर्शको के नये वर्ग को पहचाना और उनकी रुचि को जानते हुए परिवर्तन किये। सिनेमा ने अपनी भाषा के साथ साथ, अपनी अभिनयता , वस्त्र, आभूषण, देशकाल आदि में तमाम परिवर्तन किये।जिन्हें दर्शको द्वारा स्वीकार भी किया गया।

आज का हिंदी सिनेमा बहुत तरह से 1960.70 के दशक से पूर्णता भिन्न नज़र आता है।सिनेमा में बहुत तरह के परिवर्तन होते चले आ रहे हैं। स्वतंत्रता के पूर्व की फिल्में और स्वतंत्रता के बाद की फिल्मों में अंतर साफ नज़र आता है। साठ. सत्तर के दशक की फिल्मों में कहानी के कथानक का अंदाज़ा आसानी से हो जाया करता था।उसमें मिस्ट्री जैसे कंटेंट का अभाव था।उस समय फिल्म निर्माता आम जनता के बीच से ही कहानी को उठाता और बुनता था।जिसमें अधिकतर कहानियाँ परिवारिक स्थितियों या प्रेम या देशप्रेम पर आधारित होती थी।इसके अतिरिक्त उस समय में अनेक हिंदी के साहित्यकारों की रचनाओं पर भी फ़िल्में बनाई गयी थी। जिनमें प्रमुख साहित्यकार . प्रेमचंदए गुलेरीए विनोद कुमार शुक्लए भारतेंदु हरिश्चंद्रए मन्नू भंडारीए फणीश्वरनाथ रेणु आदि हैं।हिंदी के उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद की कहानियों पर फिल्में बनाने के बारे में कुंवर नारायण लिखते हैं . ष्प्रेमचंद जैसे सिद्ध कहानिकारों की कृतियाँ हर फ़िल्मकार के लिए एक चुनौती रही और जब भी उनकी कहानियों के साथ जोर.जबरदस्ती की गयी हैए वह सत्यजित राय जैसे फिल्मकार के लिए भी एक परेशानी बन गयीए जैसे . श्शतरंज के खिलाडीश्। सामान्य उपन्यासों पर कुछ बहुत अच्छी बनी फिल्मों के ज्यादा उदाहरणों का मिलना इस बात को जरूर सिध्द करता है कि एक उत्कृष्ट फिल्म और एक साहित्यिक कृति की उत्कृष्टता के बीच हमेशा ही सीधा संबंध होए यह जरूरी नहीं। ष

पहली बोलती फिल्म श्आलमआराश् से लेकर आज तक के आधुनिक फ़िल्मी जगत में आते आते हिंदी सिनेमा एक बेहद लम्बा और बदलाव पूर्ण सफर तय कर चुका है।आधुनिक सिनेमा आईने की तरह हमारे सामने आया है। इसमे न केवल

प्रेम परक कहानियाँ बल्कि यथार्थ से परिपूर्ण कथानकों को भी लिया जाने लगा है। यह अब मनोरंजन के साथ साथ लोगों में प्रेरणा का भी माध्यम बन गया है।साठ के दशक के मुकाबले में आज की फिल्में हर मसले को बड़ी स्पष्टता के साथ हमारे सामने लाती हैं।तमाम ऐसे मुद्दे जिन पर लोग चर्चा तक करना उचित नहीं समझते थेए उन पर आधुनिक सिनेमा ने फिल्में बनाकर लोगों को उसके लिये जागरूक किया। जिनमें मुख्य फिल्म . टॉयलेट. एक प्रेमकथाए पैडमैनए शुभ मंगल सावधान आदि हैं। साथ ही कुछ ऐसी फिल्में जो किसी ऐसे व्यक्तित्व पर बनायी गयी जिनसे लोगों में कुछ करने का जज्बा आ सकेएउन्हें प्रेरणा और उत्साह प्राप्त हो सके। ऐसी फिल्मों में हैं . शकुंतला देवी और दंगल आदि।

भारत में हिंदी सिनेमा के शुरुआती दौर में धार्मिक विषयों पर ही ज्यादा फिल्में बनायी जाती थी या फिर ऐतिहासिक कथानकों पर।अधिकतर धार्मिक फिल्म 'दादा साहब फाल्के' द्वारा बनायी गयी हैं। फाल्के साहब ने अपने बारें में बताते हुए १९ अक्टूबर १९१३ को 'केसरी समाचार पत्र' मे अपना साक्षात्कार देते हुए कहते हैं कि "मैं सभी विषयों पर फिल्में बनाऊंगा। पर विशेषकर प्राचीन संस्कृत नाटकों और नए मराठी नाटकों पर। फिर भारत के विभिन्न आचार-विचारों पर, सामाजिक मूल्यों पर और वैज्ञानिक और शैक्षणिक विषयों पर , मैं फिल्में बनाऊंगा। " उनके इस वक्तव्य से ऐसा प्रतीत होता है कि वह भारत की संस्कृति और यहाँ के विचारों को लोगों तक पहुँचाना चाहते थे। भारत की सांस्कृतिक चमक से पहले भारत के लोगों को प्रकाशमान कर, विश्व मे भारत का परचम लहराना उनका ध्येय रहा होगा। सन् १९१३-१९२५ के आस-पास की फिल्मों में कुछ पर पारसी रंगमंच का प्रभाव नज़र आता है।

सिनेमा के संदर्भ में चर्चा करते वक्त कुंवर नारायण को नहीं भूला जा सकता है। इन्होंने दुनिया भर की फिल्मों का कुछ इस तरह से वैचारिकए साहित्यिकए सांस्कृतिकए ऐतिहासिक और तथ्यात्मक रूप में विश्लेषण किया है कि वे फिल्मों का शब्दकोश नज़र आते हैं। ऐतिहासिक फिल्मों का वर्णन करते हुए कुंवर नारायण लिखते हैं ष्ऐतिहासिक फिल्मों के बारे में यह आम धारणा है कि वे बिना असाधारण खर्चे के नहीं बन सकतीए लेकिन श्फ्रांस्वा त्रूफोश की श्द स्टोरी ऑफ अदिल एचश्१९७५ष्ठ इस तथ्य को पुष्ट करती है कि इतिहास के किसी काल.विशेष की प्रमाणिक अनुभूति कराने के लिए जरूरी नहीं कि उस समय की चीजोंए पोशाकोंए भव्य दृश्योंए लडाइयों आदि पर जोर दिया जाये . उस समय की भावनाओं और विचारों को भी इस तरह केंद्र में रखा जा सकता है कि वे उस समय की जीवंत और प्रमाणिक अनुभूति करा सकें। अदिल की रोमांटिक भावना के साथ केवल उसका अल्बर्ट पिन्सन के लिये प्यार ही नहीं जुड़ा हैए जिसे हम उसके पिता विक्टर ह्यूगो के लेखन का भी अनिवार्य हिस्सा पाते हैं।ष

हम इक्कीसवीं सदी में जी रहे हैंए जहाँ ना जाने कितनी ही नयी तकनीक विकसित होकर हर क्षेत्र में नवीनीकरण ला रही हैं। सिनेमा भी उससे कहीं पीछे नहीं रह गया हैं। आज का हिंदी सिनेमा जिसने अपने पुराने आयाम तोड़ नयी तकनीकी के सहयोग से खुद को नवीन करए उसमें परिवर्तन किये हैं और संभवतरू ये बदलाव दर्शकों को भाने भी लगे हैं।आज का दर्शकए साठ. सत्तर के दशक के दर्शकों से काफी भिन्न और शिक्षित नज़र आता है। जिसकी वजह से समाज़ में आधुनिकीकरण आया है और उसके चलते पुरानी रूढ़ियों में भी परिवर्तन नज़र आता है। सत्तर के दशक का हिंदी सिनेमा जिन विषयों पर विचार नहीं करता थाए उन पर आज के बदलते सिनेमा ने ना केवल विचार किया अपितु उसे दर्शकों तक बड़ी सहजता के साथ पहुँचाया भी है। तकनीकी विकास इतना आगे बढ़ गया है कि उससे कल्पना के परे भी चीजें दिखाई जाने लगी है। हॉलीवुड की फिल्में इसी तरह का उदाहरण हैं। उनका तकनीकी विकास इतना ज्यादा है कि वे अपनी फिल्मों की सिनेमेटोग्राफी इस ढंग से करते हैं कि जो वास्तव में संभव भी नहीं है उसे वे बहुत स्पष्ट और शालीन तरीके से दर्शाते हैं। भारतीय सिनेमा की बात करें तो आज के दौर में हम भी कुछ पीछे नहीं रहे हैं। १२५०.६० के आस पास की फिल्में देखे और आज की फिल्में देखें तो अंतर साफ नज़र आता है। यह अंतर न केवल अभिनयए वेश भूषाए रंग सज्जाए ध्वनिए संगीतएनृत्यए भाषा आदि का ही नहीं अपितु विशेष अंतर है सिनेमेटोग्राफी का। किसी भी फिल्म को बनाने में कैमरा महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके अनेक प्रकार के शॉट्स से लेकर ज़ूमइंग तक सभी कुछ में तकनीकी रूप से भारी परिवर्तन आया है।

सिनेमा का वर्तमान जो रूप हमारे सामने मौजूद है ए उसकी पृष्ठभूमि या कहें कि जड़ रंगमंचए लोकनाट्य और नृत्यए संगीत आदि रहे हैं।हिंदी सिनेमा के इस बदलते और विकसित रूप के बारे में डॉ॰ महेंद्र मित्तल कहते हैं कि . ष्भले ही किन्हीं पूर्वाग्रहों के कारण अथवा साहित्य शास्त्र की बंधी हुई परिपाटी के कारण चित्रपट को किसी साहित्यिक विधा अथवा कला का स्तर प्रदान ना किया गया होए किंतु आज इस तथ्य से विमुख नहीं हुआ जा सकता कि सामाजिक क्षेत्र में सिनेमा ने अपना एक निजी सांस्कृतिक परिवेश धारण कर लिया है और इस परिवेश में साहित्य एवं कला के विभिन्न अलंकारों की जगमगाहट लक्षित की जा सकती है। ष इसी तरह से तकनीकी विकास की बढ़ती यात्रा मे सिनेमा का महत्वपूर्ण योगदान है। हमने आज इक्कीसवीं सदी में आते.आते तकनीकी विकास का एक युग लगभग पूर्ण कर लिया है।

सिनेमा के विकास में सबसे महत्वपूर्ण कड़ी श्कैमराश रहा है। सिनेमेटोग्राफीए फिल्म निर्माण का एक ऐसा भाग है जिसके अभाव में फ़िल्मांकन नहीं किया जा सकता। स्वतंत्रता के पूर्व की फिल्में देखें या १९६०.७० के दशक से आज तक की आधुनिक फिल्मेंए सबमें अंतर स्पष्ट तौर से नज़र आता है। श्वेत. श्याम फिल्मों से आज हिंदी सिनेमा ने तरक्की के हर आयाम पर खरा उतरते हुए फिल्मों में रंगीनियाँ भर दी हैं। इसका एक बेहतरीन उदहारण हम देखते हैं . डेढ़ करोड़ के बड़े बजट की श्वेत. श्याम फिल्म श्मुगले आज़मश ;१९६०द्ध में के० आशिफ़ के निर्देशन में बनी थी। जिसको हिंदी सिनेमा के तकनीकी विकास के चलते २००४ में श्शापूरजी पैलनजी मिस्त्रीश की जिम्मेदारी में रंगीन फिल्म बनाकर दोबारा नये रूप में दिखाया गया।सिनेमा अपनी तकनीकी में इतना आगे है कि पुरानी बनी बनायी फिल्म में रंग भर कर उसकी शोभा को बढ़ा दिया गया है। भारत में सिनेमा का आरंभ कई बड़े देशों में एक साथ हुआ। तत्कालीन बंबई नाम से चर्चित मुंबई इसका मुख्य केंद्र रहा। सिनेमटोग्राफी को सीखने का एक नया चलन आरंभ होने लगा। 1897 से 1912 तक चित्रवृतों द्वारा कैमरा का खूब प्रयोग हुआ।भारत की पहली मूक फिल्म श्राजा हरिश्चंद्रश में नीचे हिंदी और अंग्रेजी के सबटाइटल चलाये गयेए जिससे सब इस फिल्म को देख और समझ सके। एनिमेशन फिल्मों के दौर ने भी कैमरे की भूमिका बदल दी। श्रोड साइड रोमियोश को पहली एनिमेशन फिल्म माना जाता है। इन फिल्मों का उद्देश्य बच्चो के मनोरंजन के साथ. साथ उन्हें शिक्षा देना भी है।

इतना ही नहीं, सिनेमा अब अपने विकास के तहत नये रूप में रंग प्रदर्शन करने लगा है। उसका नया हिस्सा अब 3डी और एच. डी. फिल्में बनती जा रही हैं। ये ऐसी फिल्में हैं जिनमें पर्दे पर दृश्यों को बिल्कुल स्पष्ट दिखाया जाने लगा है और ३डी फ़िल्म में ऐसा प्रतीत होता है मानों दृश्य हमारे इर्द- गिर्द ही घूम रहे हों। सिनेमाई दौर के स्वर्ण वर्षों में इसकी सबसे बड़ी उपलब्धि इसका तकनीकी विकास रहा है। अब अपनी तरक्की के चलते सिनेमा, मोबाइल फोन तक आ पहुंचा है। पहले जहाँ फ़िल्म रिलीज़ ही सिनेमाघरों में होती थी, वहीं अब मोबाइल फोन में फिल्में आने लगी हैं। शायद यह दौर सिनेमा के लिए सुनहरा दौर साबित होगा। जहाँ से फिल्मों के प्रदर्शन के लिये नये आयाम स्थापित किये जाने लगे हैं। सन् ६०-७० के दशक में ऐसा विचार भी नहीं किया होगा कि सिनेमा, सिनेमाघरों से जन-जन के हाथों तक पहुँच जायेगा। इसी तरह हिंदी सिनेमा का रूप हमारे सामने नये दौर के साथ बदलता चला आ रहा है और आगे भी शायद कई नई चीज़े या बदलाव हमें सिनेमा में देखने को मिलेंगे, लेकिन यह बदलाव क्या होंगें, यह देखना, एक अच्छी फिल्म की तरह दिलचस्प होगा। समय के साथ परिवर्तन की माँग संसार में हमेशा से रही है और आगे भी रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ

- लेखक का सिनेमा . कुंवर नारायण
- हिंदी सिनेमा और उसका अध्ययन रू यूनिट तीन . प्रो॰ रमा
- बहुवचन पत्रिकाए अंक .39; अक्टूबर . दिसंबर 2013द्ध . वर्धा